न्यायमूर्ति एम. एल. सिंघल. के समक्ष

राम कुमार -याचिकाकर्ता

बनाम

श्याम सुंदर -उत्तरदाता

2000 का सी.आर. नंबर 3572

13 मार्च, 2001

हरियाणा शहरी (किराया और खाली करने का नियंत्रण) अधिनियम, 1973–धारा 13– हरियाणा पंचायती राज अधिनियम, 1994–नगर पालिका सीमा के अंदर स्थित संपत्ति–1973 अधिनियम की धारा 13 के तहत खाली करने के आवेदन को दाखिल किया गया–हरियाणा सरकार द्वारा 2 मार्च, 2000 की तारीख के साथ सूचना जारी करने के बाद, विवादित संपत्ति 1994 अधिनियम के प्रति विषय बन जाती है–क्या पिछले 9 वर्षों से लंबित खाली करने का आवेदन अमान्य के रूप में खारिज किया जा सकता है–निर्धारित किया गया कि नहीं–2 मार्च, 2000 की सूचना प्रारंभ होने के बाद लंबित प्रक्रियाओं को प्रभावित नहीं करती है क्योंकि यह पूर्वावधिक

नहीं थी।

निर्धारित किया कि 2 मार्च, 2000 की उस अधिसूचना को पूर्वव्यापी नहीं कहा जा सकता है और यदि उस अधिसूचना को पूर्वव्यापी प्रभाव दिया जाता है, तो ऐसी व्याख्या वैधानिक व्याख्या के सभी सिद्धांतों के विपरीत होगा और न्याय और निष्पक्षता के उद्देश्य को भी विफल कर देगी।वादी ने किराया नियंत्रक के समक्ष 9 साल बिताए और यह उसके साथ अन्याय होगा यदि अब यह कहा जाता है कि किराया नियंत्रक का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं है, हालांकि जब यह निष्कासन आवेदन स्थापित किया गया था तो उसके पास अधिकार क्षेत्र था और वादी को देश के सामान्य कानून के तहत प्रतिवादी को बाहर निकालने के लिए दीवानी अदालत का दरवाजा खटखटाने का निर्देश दिया गया था।

(पैरा 16)

सुमित गोयल, याचिकाकर्ता के वकील

जी. एस. गांधी, प्रतिवादी के लिए वकील

निर्णय

न्यायमूर्ति एम. एल. सिंघल

(1) श्याम सुंदर ने हरियाणा शहरी (किराया और बेदखली नियंत्रण) अधिनियम 1973 (इसके बाद जनवरी, 1992 में हरियाणा किराया अधिनियम, 1973 के रूप में संदर्भित किया जाएगा) की धारा 13 के तहत कलायत शहर की नगरपालिका सीमा के भीतर स्थित एक दुकान से राम कुमार को बाहर निकालने के लिए आवेदन दायर किया। निष्कासन आवेदन के लंबित रहने के दौरान, हरियाणा सरकार ने 2 मार्च, 2000 को अपने आधिकारिक राजपत्र में अधिसूचना जारी की, जिसके तहत "कलायत शहर" एक नगरपालिका शहर नहीं रह गया और यह हरियाणा पंचायती राज अधिनियम, 1994 (एक ग्राम पंचायत होने के नाते) के अधीन बन गया।

(2) इस अधिसूचना को देखते हुए, राम कुमार ने एक आवेदन किया जिसमें उन्होंने इस निष्कासन याचिका को खारिज करने का अनुरोध करते हुए कहा कि उस अधिसूचना की घोषणा के साथ, "कलायत शहर" एक नगरपालिका शहर नहीं रह गया है और इस तरह यह दुकान अब हरियाणा किराया अधिनियम, 1973 के प्रावधानों के अधीन नहीं है।निष्कासन आवेदन किराया नियंत्रक द्वारा संज्ञेय नहीं है और इस प्रकार यह निष्कासन आवेदन किराया नियंत्रक के समक्ष आगे नहीं बढ़ सकता है और इसे

खारिज कर दिया जाए और श्याम सुंदर को राहत देश के सामान्य कानून के तहत दीवानी न्यायालय के समक्ष निष्कासन के लिए मुकदमा दायर करना है।

(3) 17 अगस्त, 2000 के आदेश के अनुसार, इस आवेदन को किराया नियंत्रक, कैथल द्वारा अस्वीकार कर दिया गया था (हालांकि उन्होंने खुद को सिविल जज (जूनियर डिवीजन), कैथल बताया है) ।

(4) 17 अगस्त, 2000 के इस आदेश से व्यथित राम कुमार (किरायेदार) इस न्यायालय में पुनरीक्षण के लिए आए हैं।

(5) मैंने पक्षों के विद्वान वाकिलो को सुना है और रिकॉर्ड को देखा है।

(6) याचिकाकर्ता के लिए विद्वान वकील द्वारा यह प्रस्तुत किया गया था कि उस समय, जब निष्कासन आवेदन दायर किया गया था, दुकान "कलायत शहर" की नगरपालिका सीमाओं के भीतर स्थित थी और यह हरियाणा किराया अधिनियम, 1973 के प्रावधानों के अधीन थी और किराया नियंत्रक द्वारा संज्ञानात्मक थी, लेकिन हरियाणा सरकार द्वारा घोषित 2 मार्च, 2000 की अधिसूचना को देखते हुए, विचाराधीन दुकान अब हरियाणा किराया अधिनियम, 1973 के प्रावधानों के अधीन नहीं है क्योंकि "कलायत शहर" एक नगरपालिका शहर नहीं रहा है, लेकिन हरियाणा

पंचायती राज अधिनियम, 1994 के प्रावधानों के अधीन ग्राम पंचायत बन गया था।यह प्रस्तुत किया गया कि उक्त अधिसूचना को देखते हुए किराया नियंत्रक के समक्ष निष्कासन आवेदन बनाए रखने योग्य नहीं रह गया है और इसलिए इसे बनाए रखने योग्य नहीं होने के कारण खारिज कर दिया जाना चाहिए था।

(7) याचिकाकर्ता के वकील ने कहा कि उस अधिसूचना के मद्देनजर किराया नियंत्रक के पास उसे दुकान से बाहर निकालने का अधिकार क्षेत्र कैसे हो सकता है,, जब उसका अधिकार क्षेत्र समाप्त हो चुका है।।यह दावा किया गया कि किराये नियंत्रक की अधिकारिता इस निष्कासन आवेदन को सुनने के लिए उसके निर्णय के दिन तक जीवित रहना चाहिए थी और जब उसके निर्णय के दिन से पहले, उसके पास आवश्यक अधिकार नहीं थे, तो यह अस्थायी रूप से मान्य नहीं किया जाना चाहिए था।।यह प्रस्तुत किया गया था कि जब इस दुकान पर हरियाणा किराया अधिनियम, 1973 के प्रावधानों की प्रयोज्यता समाप्त हो गई थी तो किराया नियंत्रक के समक्ष कोई कार्यवाही जारी नहीं रखी जा सकती थी।यह भी प्रस्तुत किया गया था कि निर्णय की तारीख पर, किराया नियंत्रक द्वारा कोई भी आदेश पारित नहीं किया जा सकता है, जिसे वैध और कानूनी कहा जा सकता है।

(8) दूसरी ओर, प्रत्यर्थी के विद्वान वकील ने प्रस्तुत किया कि 2 मार्च, 2000 की अधिसूचना लंबित कार्यवाही को प्रभावित नहीं करेगी क्योंकि यह केवल संचालन में प्रत्याशित थी और यह संचालन में पूर्वव्यापी नहीं थी।यह प्रस्तुत किया गया था कि "कलायत शहर" केवल हरियाणा राज्य के आधिकारिक राजपत्र में अधिसूचित इसकी घोषणा की तारीख से ही एक नगरपालिका शहर नहीं रह गया है।अपने निवेदन के समर्थन में उन्होंने **ग्राम पंचायत देह मौज़ा घढ़ी ब्राह्मण तहसील सोनीपत बनाम केशो नारायण और अन्य** [1](1) की ओर मेरा ध्यान आकर्षित किया, जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया था कि पंजाब अधिनियम, 1961(1961 का अधिनियम क्रमांक 18) की धारा 13 में निहित प्रावधान, जो उस अधिनियम के प्रवर्तन से उत्पन्न होने वाले किसी भी मामले पर सिविल न्यायालयों की अधिकारिता को छीन लेता है, जिसे केवल प्रक्रिया का मामला नहीं माना जा सकता है ताकि पूर्वव्यापी रूप से काम किया जा सके।जहां सिविल न्यायालय में एक ऐसे समय में मुकदमा दायर किया गया है जब वह न्यायालय मुकदमे पर विचार करने के लिए पूरी तरह से सक्षम था (यानी 1961 का पंजाब अधिनियम क्रमांक 18 लागू होने से पहले) और वह मुकदमा अधिनियम लागू होने की तारीख से लंबित है, तो

[1] ए. आई. आर 1964 पंजाब 464

अधिनियम स्पष्ट शब्दों या आवश्यक इरादे के बिना, न्यायालय को उस अधिकार क्षेत्र से वंचित नहीं कर सकता है जिसका उसने मुकदमे पर विचार करने के समय प्रयोग किया था, ताकि सिविल न्यायालय द्वारा संशोधन की तारीख तक आयोजित पूरी कार्यवाही को रद्द किया जा सके। ऐसा निर्माण वैधानिक व्याख्या के सभी सिद्धांतों के विपरीत होगा और न्याय और निष्पक्ष खेल के उद्देश्य को भी पराजित करेगा।

(9) विद्वान वकील ने मेरा ध्यान **पंजाब राज्य बनाम के.एल. ग्रोवर और अन्य** (2) की ओर भी आकर्षित किया, जहां किरायेदार को बेदखल करने के लिए एक मुकदमा जो कि सिविल न्यायालय के समक्ष इमारत के निर्माण के पूरा होने के पांच साल की समाप्ति से पहले दायर किया गया था जिसमें निष्कासन के लिए डिक्री पारित की गई थी (यहां उल्लेख किया जा सकता है कि पंजाब राज्य में पूर्वी पंजाब शहरी किराया प्रतिबंध, अधिनियम के प्रावधानों से 5 साल की अवधि के लिए निर्मित इमारतों को छूट देने की एक अधिसूचना है)। 5 वर्ष की अवधि की समाप्ति पर, यह माना गया कि डिक्री को अच्छी तरह से निष्पादित किया जा सकता है।

(10) **फर्म अमर नाथ बनाम टेक चंद** [2] में , यह देखा गया कि जहां इमारत मार्च, 1960 में पूरा की थी और मुकदमा 14 जनवरी, 1963 को दायर किया गया था, यानी इमारत के पूरा होने की तारीख से 5 साल की समाप्ति से पहले, लेकिन डिक्री 14 अगस्त, 1969 को पारित की गई थी, यानी छूट की अवधि के बाद, धारा 13 से छूट, मकान मालिक-डिक्री धारक को उपलब्ध थी और डिक्री निष्पादन योग्य थी।

(11) उन्होंने **आर. राजगोपाल रेड्डी बनाम पी. चंद्रशेखरन** [3] की ओर मेरा ध्यान आकर्षित किया, जहां यह अभिनिर्धारित किया गया है कि अधिनियम की धारा 4(1) को उस व्यक्ति के खिलाफ, जिसके नाम पर ऐसी संपत्ति है या किसी अन्य व्यक्ति के खिलाफ बेनामी रखी गई संपत्ति में, किसी भी अधिकार को लागू करने के लिए मुकदमा, दावा या कार्रवाई के लिए लागू नहीं किया जा सकता है, यदि ऐसी कार्यवाही उसके वास्तविक मालिक होने का दावा करने वाले व्यक्ति की ओर से शुरू की गई है अधिनियम की धारा 4(1) के लागू होने से पहले ।जहाँ तक धारा 4 (2) का संबंध है, केवल इतना ही प्रावधान किया गया है कि यदि किसी वादी द्वारा मुकदमा दायर किया जाता है जो दस्तावेज़ के तहत संपत्ति का मालिक होने का दावा करता है और संपत्ति को अपने नाम पर

---

[2] ए. आई. आर 1972 एस. सी 1548

[3] ए. आई. आर 1996 एस. सी 238

रखता है, तो एक बार धारा 4 (2) लागू होने के बाद ऐसे किसी भी मुकदमे में, बेनामी संपत्ति का वास्तविक मालिक होने का दावा करने वाले व्यक्ति द्वारा या उसकी ओर से किसी भी बचाव की अनुमति या कार्रवाई की अनुमति नहीं दी जाएगी।इस तरह के बचाव की अस्वीकृति जो पहले उपलब्ध थी, स्वयं यह सुझाव देती है कि धारा 4 (2) द्वारा पहले से मौजूद अधिकार पर एक नया दायित्व या प्रतिबंध लगाया गया है और इस तरह के प्रावधान को आवश्यक निहितार्थ से पूर्वव्यापी या पूर्वप्रभावी नहीं कहा जा सकता है।यह भी ध्यान रखना उचित है कि धारा 4 (2) स्पष्ट रूप से पूर्वव्यापी रूप से लागू नहीं होती है।जहाँ तक ऐसे मुकदमे का संबंध है जो धारा 4 (2) के व्यापक दायरे में आता है, धारा 4 (1) का निषेध उस पर लागू नहीं हो सकता है क्योंकि यह वादी द्वारा किसी भी संपत्ति, बेनामी के संबंध में अधिकार को लागू करने के लिए दायर किया गया दावा या कार्रवाई नहीं है।इसके विपरीत, यह वादी के नाम पर बिक्री विलेख या स्वामित्व विलेख से आने वाला एक मुकदमा, दावा या कार्रवाई है भले ही ऐसा मुकदमा 19 मई, 1988 से पहले दायर किया गया हो, अगर वास्तविक मालिक द्वारा बचाव दाखिल करने के चरण से पहले पहुंच जाता है।धारा 4 (2) 19 मई, 1988 से लागू हो जाती है, तो धारा 4 (2) द्वारा निर्धारित इस तरह के बचाव की अनुमति ऐसे प्रतिवादी को नहीं दी जाएगी।हालांकि, इसका मतलब यह होगा कि धारा 4 (1) और 4 (2) को केवल उस अंक पर निहित रूप से पूर्वव्यापी

माना जा सकता है ताकि इसे ऐसे अधिकारों के प्रवर्तन के संबंध में सभी लंबित मुकदमे या वास्तविक मालिक जो अधिनियम के प्रवर्तन में आने से पहले किए गए बेनामी लेनदेन के पक्षकार हैं और विशेष रूप से इसकी धारा 4। शामिल किया जा सके।

(12) अधिनियम की प्रस्तावना में ही कहा गया है कि यह बेनामी लेनदेन और बेनामी संपत्ति की वसूली के अधिकार को प्रतिबंधित करने के लिए एक अधिनियम है, जो उससे जुड़े या आकस्मिक मामलों के लिए है।इस प्रकार यह अन्य बेनामी द्वारा धारित संपत्ति के वास्तविक मालिकों के तत्कालीन मौजूदा अधिकारों को समाप्त करने के लिए अधिनियमित किया गया था। इस तरह के अधिनियम को विधायिका द्वारा कोई पूर्वव्यापी प्रभाव नहीं दिया गया था। धारा 4 पूर्वव्यापी नहीं है।धारा 3 की उप-धारा के प्रावधानों पर केवल एक नज़र डालने से यह भी पता चलता है कि धारा 3 (1) के तहत निषेध उन व्यक्तियों के खिलाफ है जिन्हें बेनामी लेनदेन में प्रवेश करना है और यदि यह निर्धारित किया गया है कि कोई भी व्यक्ति किसी भी बेनामी लेनदेन में प्रवेश नहीं करेगा जिसका स्पष्ट रूप से अर्थ है उस तारीख से जब यह निषेध लागू होता है यानी 5 सितंबर, 1988 से प्रभावी होता है।यह भविष्य के बेनामी लेनदेन का ध्यान रखता है।धारा 3 की उप-धारा (3) भी इस पहलू पर प्रकाश डालती है।इसमें कहा गया है कि जो कोई भी बेनामी लेन-देन

करता है, उसे तीन साल तक के कारावास या जुर्माने या दोनों से दंडित किया जाएगा।इसलिए, यह प्रावधान इस तरह के बेनामी लेनदेन में प्रवेश करने का एक नया अपराध बनाता है।इसे गैर-संज्ञेय और जमानतीय बनाया गया है जैसा कि उप-धारा (4) के तहत निर्धारित किया गया है।यह स्पष्ट है कि जब कोई वैधानिक प्रावधान एक नया दायित्व और नया अपराध पैदा करता है, तो स्वाभाविक रूप से इसका संभावित संचालन होगा और केवल उन अपराधों को शामिल करेगा जो धारा 3 (1) के लागू होने के बाद होते हैं।

(13) संक्षेप में, **आर. राजगोपाल रेड्डी के मामले** (ऊपर) में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा जो निर्णय दिया गया था, वह यह है कि **बेनामी लेनदेन (निषेध) अधिनियम, 1988** पूर्वव्यापी नहीं है। **बेनामी लेनदेन (निषेध) अधिनियम (1988 का 45)** के प्रवर्तन से पहले हुए बेनामी लेनदेन को बेनामी के रूप में अच्छी तरह से दिखाया जा सकता है।

(14) यदि "क" इस अधिनियम के लागू होने के बाद अपने नाम के बजाय "ख" के नाम से संपत्ति खरीदता है, तो "ख" को संपत्ति का पूर्ण स्वामी माना जाएगा और "क" के लिए यह कहना खुला नहीं होगा कि वह संपत्ति का वास्तविक मालिक है और "ख" केवल एक बेनामीदार था, लेकिन यदि यह बिक्री इस अधिनियम के लागू होने से पहले हुई थी, तो यह साबित करने के लिए "क" के लिए खुला होगा कि वह संपत्ति का वास्तविक मालिक है और "ख" केवल एक बेनामीदार था।

(15) इन प्राधिकृतियों के आधार पर, जवाबी पक्ष के विद्यानुसार कहा गया कि 2 मार्च, 2000 की सूचना पूर्वदर्शी प्रभाव नहीं था, बल्कि केवल पूर्वानुमानित प्रभाव था ।

संजीत सिंह ग्रेवाल और अन्य बनाम पंजाब राज्य 167 & अन्य (न्यायमूर्ति जवाहर लाई गुप्ता,)

हरियाणा राज्य द्वारा अपने आधिकारिक राजपत्र में उक्त अधिसूचना जारी किए जाने के बाद कलायत एक नगरपालिका शहर नहीं रह गया।

(16) उक्त अधिसूचना को पूर्वव्यापी प्रभाव वाला नहीं कहा जा सकता है, क्योंकि यदि उस अधिसूचना को पूर्वव्यापी प्रभाव दिया जाता है, तो ऐसी व्याख्या वैधानिक व्याख्या के सभी सिद्धांतों के विपरीत होगी और न्याय और निष्पक्ष खेल के उद्देश्य को भी विफल कर देगी। वादी श्याम सुंदर ने किराया नियंत्रक के सामने 9 साल बिताए और यह उनके साथ अन्याय होगा यदि अब यह कहा जाता है कि किराया नियंत्रक का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं है, हालांकि जब यह निष्कासन आवेदन स्थापित किया गया था तो उनका अधिकार क्षेत्र था और श्याम सुंदर को देश के

सामान्य कानून के तहत राम कुमार को बाहर निकालने के लिए दीवानी अदालत का दरवाजा खटखटाने का निर्देश दिया जाता है।

(18) इसलिए, यह संशोधन विफल हो जाता है और खारिज कर दिया जाता है।

एस.सी.के

न्यायमूर्ति जवाहर लाई गुप्ता और न्यायमूर्ति एन. के. सूद के समक्ष

संजीत सिंह ग्रेवाल और अन्य-याचिकाकर्ता

बनाम

पंजाब राज्य और अन्य,-उत्तरदाता

सी.डब्ल्यू.पी. 2000 की संख्या 6645

28 मार्च, 2001

भारत का संविधान, 1950-अनुच्छेद 226-भूमि अधिग्रहण अधिनियम, 1894- धारा 4 और 5-ए-पंजाब क्षेत्रीय और नगर योजना और विकास अधिनियम, 1995। धारा 14, 15 और 56 से 78-पंजाब नई राजधानी (परिधीय) नियंत्रण अधिनियम, 1952- धारा 5, 10 और

11-पंजाब क्षेत्रीय और नगर योजना और विकास (सामान्य) नियम, 1995-राज्य सरकार भूमि अधिग्रहण के लिए 1894 के अधिनियम की धारा 4 के तहत अधिसूचना जारी करती है-एक नया शहर, आनंदगढ़ स्थापित करने के लिए अधिग्रहित की जाने वाली भूमि-विधानमंडल द्वारा 1995 के अधिनियम की घोषणा-उद्देश्य और उद्देश्य-1995 अधिनियम जो आवास, इंजीनियरिंग और नगर योजना आदि के क्षेत्रों के विशेषज्ञों से मिलकर एक उच्च शक्ति वाले बोर्ड की स्थापना के उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए अधिनियमित किया गया है, जो शहरीकरण की प्रक्रिया में प्रशासन का मार्गदर्शन और निर्देश दे सकता है-धारा 15 के तहत, बोर्ड किसी भी व्यक्ति को संबद्ध कर सकता है जिसकी सलाह उसे अपने कार्यों को करने में आवश्यकता हो सकती है-राज्य सरकार, 1995 के तहत एक बोर्ड का गठन कर सकती है।

अस्वीकरण : स्थानीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के सीमित उपयोग के लिए है ताकि वह अपनी भाषा में इसे समझ सके और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है । सभी व्यवहारिक और आधिकारिक उद्देश्यो के लिए निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रमाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य के लिए उपयुक्त रहेगा ।

सिद्धांत रॉयल

प्रशिक्षु न्यायिक पदाधिकारी

(Trainee Judicial Officer)

जगाधरी, हरियाणा